□□□□ □□□□

जनसत्ता 1 सितंबर, 2014: भारतीय प्रशासनिक सेवा परीक्षाओं में भारतीय भाषाओं की उपेक्षा और दोयम दर्जे के व्यवहार का मुद्दा

कुछ समय से बराबर उठता रहा है। संघ लोक सेवा आयोग की प्रशासनिक सेवाओं के अतिरिक्त भी अधिकतर प्रतियोगी परीक्षाओं में भारतीय भाषाओं की स्थिति ऐसी ही है। प्रश्नपत्रों पर यह स्पष्ट लिखा रहता है कि प्रश्नों के पाठ में भिन्नता होने पर अंगरेजी वाला पाठ मान्य होगा और कई प्रश्नपत्रों में तो यह भी लिखा नहीं होता है, जबकि अक्सर हिंदी पाठ अबूझ और कई बार गलत तक होता है। यह बात विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की राष्ट्रीय पात्रता परीक्षा से लेकर सामान्य प्रतियोगी परीक्षाओं तक में देखी जा सकती है। इन आंदोलनकारियों को इस बात का श्रेय दिया जाना चाहिए कि उन्होंने भारतीय भाषाओं की इस उपेक्षा को फिर से बहस में ला दिया।

यह कोई प्रशासनिक सेवाओं का अलग-थलग मसला नहीं है, बल्कि हमारे देश की उस अकादमिक व्यवस्था का एक विस्तार है, जहां भारतीय भाषाओं की इसी तरह की उपेक्षा होती है और जो इन भाषाओं के पठन-पाठन की गतिविधियों और इनके विद्यार्थियों के लिए अकादमिक और पेशेगत अवसरों को सीमित करती है। अगर हम उच्च शिक्षा की स्थिति पर एक नजर डालें तो स्पष्ट हो जाएगा कि सरकारी नीतियां इस असमान व्यवस्था को प्रोत्साहित करती हैं।

आजादी के बाद हमारे राजनीतिक नेतृत्व ने महसूस किया कि अन्य विकसित मूलक मानकों पर विकसित देशों की बराबरी करने में हमें वक्त लगेगा, तकनीक और विज्ञान का क्षेत्र ऐसा है जिसमें और जिसके जरिए हम तत्काल विकसित देशों की पंक्ति में जा खड़े होंगे। फलत: हमारी सरकारें (चाहे किसी भी पार्टी की हों) तकनीकी और वैज्ञानिक शिक्षा पर विशेष ध्यान देती हैं, उसके बाद ही सामाजिक विज्ञान के अनुशासनों का स्थान आता है। और अंत में, भाषा और साहित्य जैसे मानविकी के विषय रह जाते हैं।

अभी हमारे देश में सोलह भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आइआइटी) हैं, जिनमें छह-सात काफी प्रतिष्ठित हैं और अन्य अभी आकार ले रहे हैं। इसके अतिरिक्त तीस राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान (एनआइटी) हैं। विज्ञान-शिक्षा के क्षेत्र में पांच भारतीय विज्ञान शिक्षा और अनुसंधान संस्थान (आइआइएसइआर) हैं। साथ ही, भारतीय विज्ञान संस्थान बंगलुरु, भारतीय प्रतिरक्षा संस्थान, नई दिल्ली के अलावा भी विज्ञान की विभिन्न शाखाओं के लिए कई संस्थान और परिषदें हैं।

समाज विज्ञान की शिक्षा के क्षेत्र में भी ऐसी कई संस्थाएं हैं- टाटा सामाजिक विज्ञान संस्थान (मुंबई और हैदराबाद), गोखले अर्थशास्त्र और राजनीतिक विज्ञान संस्थान (पुणे), क्लिग सामाजिक विज्ञान संस्थान (भुवनेश्वर), मद्रास विकास अध्ययन संस्थान, विकास अध्ययन संस्थान कोलकाता जैसी कई संस्थाएं हैं। लेकिन भाषा और साहित्य के क्षेत्र में भारतीय भाषा संस्थान मैसूर, केंद्रीय हिंदी संस्थान, सेंट्रल इंस्टीट्यूट ऑन क्लासिकल तमिल जैसी गिनी-चुनी संस्थाओं के अलावा महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय और मौलाना आजाद राष्ट्रीय उर्दू

विश्वविद्यालय ही हैं।

इसी तरह उच्च शिक्षा में शोध के लिए वैज्ञानिक एवं औद्योगिक शोध परिषद (सीएसआइआर), वैज्ञानिक एवं अभियांत्रिकी शोध परिषद (एसइआरसी) जैसी संस्थाएं वैज्ञानिक शोध को प्रोत्साहित करती हैं। समाजविज्ञान के क्षेत्र में इंडियन काउंसिल फॉर सोशल साइंस रिसर्च अकादमिक शोध को बढ़ावा देती है। इसके अलावा समाजविज्ञान के विभिन्न अनुशासनों में भी कई संस्थान हैं। इतिहास के क्षेत्र में ऐतिहासिक अनुसंधान परिषद और दर्शनशास्त्र के लिए इंडियन काउंसिल फॉर फिलोसोफिकल रिसर्च ऐसी ही परिषदें हैं। इसी तरह नेहरू स्मारक संग्रहालय एवं पुस्तकालय आधुनिक भारत के इतिहास से जुड़े विभिन्न प्रसंगों पर शोध को बढ़ावा देता है।

ये परिषदें और संस्थाएं न केवल शोध के लिए विभिन्न शोधवृत्तियां देती हैं, बल्कि फील्ड वर्क को भी प्रोत्साहित करती हैं। यही नहीं, ये संस्थाएं संबंधित क्षेत्र में शोध को बढ़ावा देने के उद्देश्य से प्राय: देश के अलग-अलग हिस्सों में शोध पद्धति की कार्यशालाओं का आयोजन करती हैं, जिनमें युवा संकाय सदस्य और शोधार्थी भाग लेते हैं। उक्त सरकारी संस्थाओं के अतिरिक्त कई गैर-सरकारी संस्थाएं भी सामाजिक विज्ञान और विज्ञान के क्षेत्रों में कार्यरत हैं। ये सभी अपने-अपने क्षेत्र में शोध को बढ़ावा देने का काम करती हैं। साथ ही साथ, ये अपनी परियोजनाओं और कार्यक्रमों के जरिए रोजगार के अवसर भी मुहैया कराती हैं।

वहीं अगर हम भाषा और साहित्य की तरफ नजर डालें तो भारतीय भाषाओं की साहित्य अकादमियों के अलावा कुछ खास है नहीं। उक्त साहित्य अकादमियां और अन्य निजी न्यास या संस्थान भी साहित्यिक पुरस्कारों पर ज्यादा ध्यान देते हैं, न कि शोध के लिए। शोधवृत्तियां प्राय: नहीं देते और न ही शोध से संबंधित गतिविधियां आयोजित करते हैं। हालांकि इन अकादमियों और निजी न्यासों का दायरा उच्च शिक्षा नहीं है, फिर भी ये पुरस्कारों की स्थापना के साथ कुछ शोधवृत्तियां स्थापित करेंगे तो उस भाषा और साहित्य का शैक्षणिक विस्तार ही होगा। इसलिए ऐसा किया जाना चाहिए।

हम इस तरह देखते हैं कि सरकारें भारतीय भाषाओं को कोई विशेष महत्त्व नहीं देती हैं। हां, इन भाषाओं के तकनीकी विकास पर अवश्य ध्यान दिया जा रहा है, जिसके तहत प्रगत संगणन विकास केंद्रों (सीडैक), केंद्रीय भारतीय भाषा संस्थान मैसूर, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय नई दिल्ली में बहुत-सी अकादमिक गतिविधियां चल रही हैं। इस पूरी परिघटना की सबसे बड़ी विडंबना है कि भाषा और साहित्य जैसे मानविकी विषयों को रोजगारमूलक शिक्षा के नाम पर नजरअंदाज किया जा रहा है, जबकि बेरोजगारी तो बढ़ ही रही है। सही है कि रोजगार एक आवश्यक तत्त्व है, लेकिन शिक्षा महज रोजगार के लिए नहीं हो सकती। शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को अपने समाज, राजनीति और संस्कृति के यथार्थ से रूबरू कराना भी होता है।

अपने समाज और परिवेश से विद्यार्थियों को जोड़ने और संपूर्ण शिक्षा देने के इसी उद्देश्य से आइआइटी, एनआइटी जैसी तकनीकी संस्थाओं में सामाजिक विज्ञान और मानविकी विभाग भी स्थापित किए गए। उच्च शिक्षा के लिए बनाई गई यशपाल समिति की रिपोर्ट में भी यह एक महत्त्वपूर्ण सिफारिश थी। लेकिन यह फलीभूत नहीं हुई, क्योंकि शायद ही किसी संस्थान में हिंदी या किसी अन्य भारतीय भाषा को स्थान मिला हो। इन सभी संस्थानों के मानविकी और सामाजिक विज्ञान विभागों में सामाजिक विज्ञान के कुछ विषय पढ़ाए जाते हैं, जबकि साहित्य और भाषा के नाम पर अंगरेजी पढ़ाई जाती है, हिंदी या अन्य कोई भारतीय भाषा नहीं। यही स्थिति राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थानों की है। एक-दो अपवाद और हिंदी दिवस जैसी औपचारिकताओं को छोड़ दें तो भारतीय भाषा संबंधी गतिविधियां प्राय: इन संस्थानों में नहीं होतीं। भारतीय प्रबंधन संस्थान तो इस मामले में और भी पीछे हैं।

यही हाल उन निजी विश्वविद्यालयों का है, जो पिछले कुछ वर्षों में धूमधाम से खुले हैं। अधिकतर निजी विश्वविद्यालय विज्ञान, तकनीक, प्रबंधन आदि अध्ययन के लिए ही हैं, जिनमें भाषा-साहित्य के नाम पर बस अंगरेजी है। लेकिन जो निजी विश्वविद्यालय सामाजिक विज्ञान और मानविकी के

बराबर स्थान देने का दावा करते हैं, वहां भी प्राय: भारतीय भाषाओं को कोई स्थान नहीं मलिता है□ उदाहरण के लि□, □मटिी वशि्ववद्यािलय में जर्मन, स्पेनशि, फ्रांसीसी और अंगरेजी में स्नातक की प□ाई होती है, लेकनि भारतीय भाषाओं में सर्फि संस्कृत को यह स्थान देता है□ जोधपुर नेशनल यूनविर्सटिी जैसे कुछ ही वशि्ववद्यािलय भारतीय भाषाओं के पाठ्यक्रम प्रस्तावति करते हैं□

इन अपवादों को छो□ दें, तो ऐसे नजिी वशि्ववद्यािलयों की फेहरस्ति लंबी है, जहां भारतीय भाषाओं का अस्तति्व ही नहीं है और उनमें साहति्य के नाम पर अंगरेजी साहति्य या कहीं-कहीं तुलनात्मक साहति्य प□ाया जाता है□ कई सरकारी वशि्ववद्यािलय भी तुलनात्मक साहति्य के अध्यापकों के लि□ योग्यता तुलनात्मक साहति्य या अंगरेजी (अन्य कसिी भाषा में नहीं) में □म□ नर्धिारति करते हैं□ अंगरेजी साहति्य प□ा□ जाने से कोई समस्या नहीं है, लेकनि भारतीय भाषाओं का साहति्य भी इन्हें अवश्य प□ाना चाहि□□ अगर अंगरेजी साहति्य प□ाया जा सकता है, तो हदिी, उर्दू, पंजाबी, बांग्ला, मराठी, असमी, मलयालम, तमलि, तेलुगू, ओ□यिा, गुजराती आदि भाषाओं का साहति्य क्यों नहीं प□ाया जा सकता!

नजिी वशि्ववद्यािलय संबंधति राज्य की वधिानसभा द्वारा पारति अधनियिम के तहत स्थापति कि□ जाते हैं और इन्हें वशि्ववद्यािलय अनुदान आयोग भी मान्यता देता है, तो क्यों नहीं इन२ के लि□ यह आवश्यक कयिा जा□ कि ये कम से कम उस राज्य की भाषा और उसके साहति्य के कुछ पाठ्यक्रम प्रस्तावति करें□ यही बात आइआइटी और आइआइ□म पर भी लागू होनी चाहि□□ कतिना अच्छा हो, अगर देश के अलग-अलग हस्सिों में स्थति इन संस्थानों में अलग-अलग भारतीय भाषा□ँ भी प□ाई जा□ँ□ इसके वपिरीत

वर्तमान व्यवस्था के कारण अधकितर छात्र-छात्राओं की प□ाई की भाषा व्यवहार की भाषा से अलग हो जाती है□ जब उनकी ज्ञान की प्रक्रयिा से ही इन भाषाओं को काट दयिा गया है, तो फरि यह शकियित कहां से जायज है कि अमुक अनुशासन भारतीय भाषाओं में नहीं प□ा□ जा सकते! यह □क सर्ववदिति तथ्य है कि हमारे देश में प्राय: उच्च शक्षिा का माध्यम भारतीय भाषा□ँ नहीं हैं□ कुछ राज्यों के वशि्ववद्यियालों में अवश्य भारतीय भाषाओं के माध्यम से पठन-पाठन होता है, लेकनि इसके लि□ उन्हें दोयम दर्जे की पाठ्यपुस्तकों पर नर्भिर रहना प□ता है□ फलस्वरूप, अक्सर वे उस वषिय में पारंगत होने और आगे की प□ाई से वंचति हो जाते हैं□ इसके अलावा भारतीय भाषाओं के लि□ वशि्ववद्यािलय अनुदान आयोग की वशिेष वति्तीय सहायता से संचालति कार्यक्रम या पुस्तकालय भी प्राय: नहीं दखिाई देते□

अब जरा उस शकियित पर भी नजर डालते हैं, जो भारतीय भाषाओं, खासकर हदिी के लेखक-प्रकाशक करते हैं कि साहति्य को पाठक नहीं मलि रहे हैं□ मलिेंगे कहां से, जब संभावति पाठकों की पूरी पी□ी को ही व्यवस्थति तरीके से उसके साहति्य, भाषा और समाज से दूर कर दयिा जाता है□ यह स्थति अन्य भारतीय भाषाओं की तुलना में हदिी में ज्यादा वकिट है□

यह मुद्दा चाहे सीधे रूप से प्रतयिोगी परीक्षाओं से न जु□ता हो, इससे अलहदा नहीं है, बल्कि यह उस व्यापक परदृिश्य से संबद्ध है, जहां भारतीय भाषा□ँ उपेक्षति हैं और जहां यह माना जाता है कि वे अंगरेजी से पछि□ी हुई हैं, ज्ञान का माध्यम नहीं बन सकती हैं और संवाद-कौशल या व्यक्ततिव-वकिास का पर्याय तो अंगरेजी ही है□ □क बार यह मान लेने के बाद अकादमकि संसाधनों का असमान वतिरण आम स्वीकृत पा जाता है, जो भारतीय भाषाओं को और हाशयि पर धकेल देता है□ इसलि□ इन भाषाओं के इस मसले को समग्रता में देखा जाना चाहि□□

फेसबुक पेज को लाइक करने के लिए क्लिक करें- https://www.facebook.com/Jansatta

ट्विटर पेज पर फॉलो करने के लिए क्लिक करें- https://twitter.com/Jansatta